IJARETY

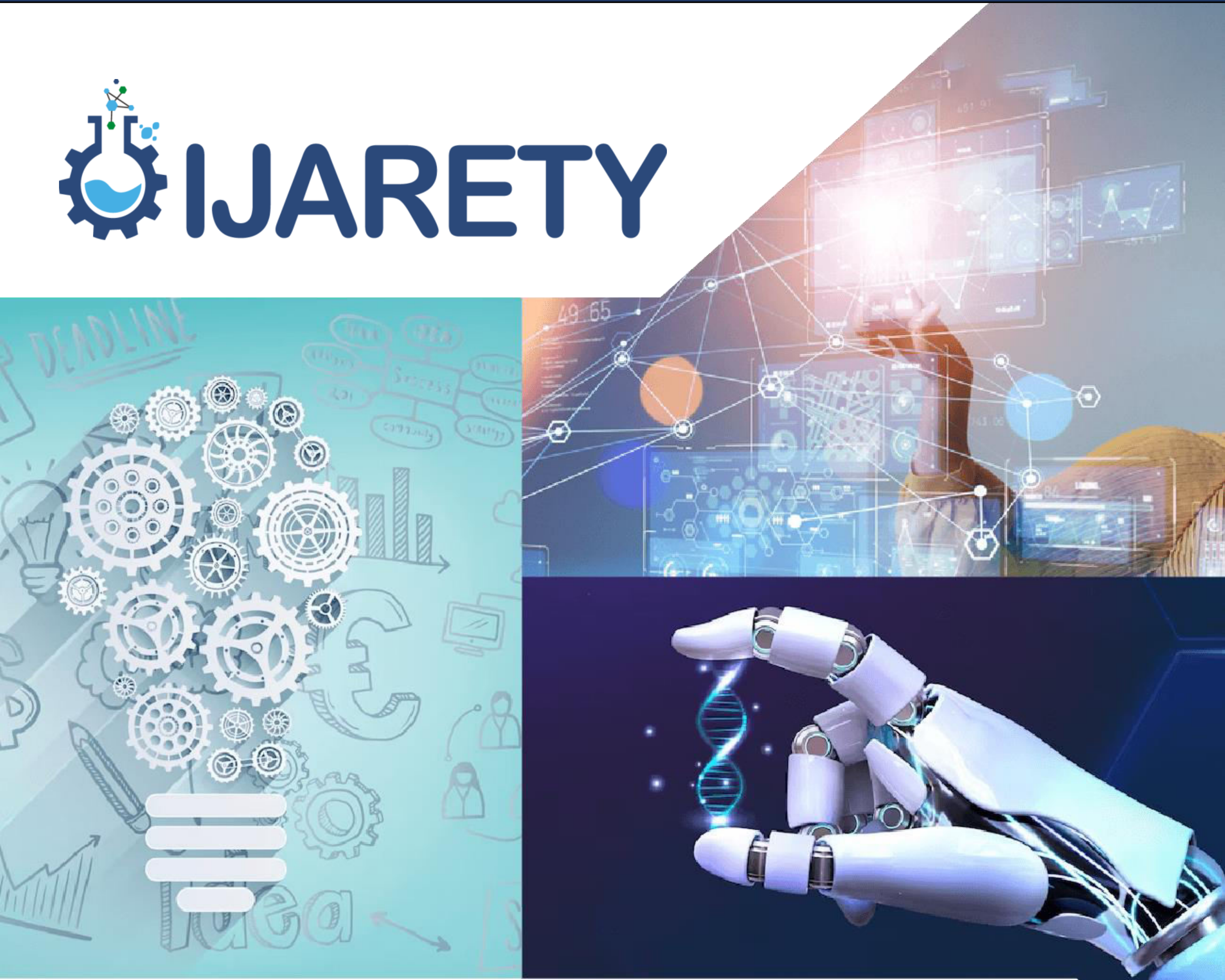

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY (IJARETY)

Volume 11, Issue 1, January 2024

Impact Factor: 6.421

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor

doi crossref

निस्केयर
NISCAIR

www.ijarety.in   editor.ijarety@gmail.com

International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

IJARETY | ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421 | A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

वैदिक साहित्यमें निहित नैतिक मूल्य

Sanwar Mal Jat

Assistant Professor, Sanskrit, Govt. Girls College, Tehsil-Chomu, District-Jaipur, Rajasthan, India

सार

वैदिक साहित्य से तात्पर्य उस विपुल साहित्य से है जिसमें वेदसंहिता, ब्राह्मण-ग्रन्थ, आरण्यक एवं उपनिषद् शामिल हैं। वर्तमान समय में वैदिक साहित्य ही हिन्दू धर्म के प्राचीनतम स्वरूप पर प्रकाश डालने वाला तथा विश्व का प्राचीनतम् स्रोत है। वैदिक साहित्य को 'श्रुति' कहा जाता है, क्योंकि (सृष्टि/नियम)कर्ता ब्रह्मा ने विराटपुरुष भगवान् की वेदध्वनि को सुनकर ही प्राप्त किया है। अन्य ऋषियों एवं ऋषिकाओं ने भी इस साहित्य को श्रवण-परम्परा से ही ग्रहण किया था तथा आगे की पीढ़ियों में भी ये श्रवण परम्परा द्वारा ही स्थान्तरित किये गए। इस परम्परा को श्रुति परम्परा भी कहा जाता है तथा श्रुति परम्परा पर आधारित होने के कारण ही इसे श्रुति साहित्य भी कहा जाता है।

वैदिक साहित्य के अन्तर्गत ऊपर लिखे सभी वेदों के कई उपनिषद, आरण्यक [1] इनकी भाषा संस्कृत है जिसे अपनी अलग पहचान के अनुसार वैदिक संस्कृत कहा जाता है - इन संस्कृत शब्दों के प्रयोग और अर्थ कालान्तर में बदल गए या लुप्त हो गए माने जाते हैं। ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिन्दू-आर्य जाति के बारे में इनको एक अच्छा सन्दर्भ माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्त्व बना हुआ है।[2]

परिचय

रचना के अनुसार प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द-राशि के चार भाग हैं। वेद के मुख्य मन्त्र भाग को संहिता कहते हैं। संहिता के अलावा हरेक में टीका अथवा भाष्य के तीन स्तर होते हैं। कुल मिलाकर ये हैं[2] :

- संहिता (मन्त्र भाग)
- ब्राह्मण-ग्रन्थ (गद्य में कर्मकाण्ड की विवेचना)
- आरण्यक (कर्मकाण्ड के पीछे के उद्देश्य की विवेचना)
- उपनिषद (परमेश्वर, परमात्मा-ब्रह्म और आत्मा के स्वभाव और सम्बन्ध का बहुत ही दार्शनिक और ज्ञानपूर्वक वर्णन)

जब हम चार 'वेदों' की बात करते हैं तो उससे संहिता भाग का ही अर्थ लिया जाता है। उपनिषद (ऋषियों की विवेचना), ब्राह्मण (अर्थ) आदि मंत्र भाग (संहिता) के सहायक ग्रंथ समझे जाते हैं। वेद ४ हैं - ऋक्, साम, यजुः और अथर्व। पूर्ण रूप में ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद व अथर्ववेद।[1,2,3]

वैदिक साहित्य का काल

इस विषय के विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है कि वेदों की रचना कब हुई और उनमें किस काल की सभ्यता का वर्णन मिलता है। भारतीय वेदों को अपौरुषेय (किसी पुरुष द्वारा न बनाया हुआ) मानते हैं अतः नित्य होने से उनके काल-निर्धारण का प्रश्न ही नहीं उठता; किन्तु पश्चिमी विद्वान इन्हें ऋषियों की रचना मानते हैं और इसके काल के सम्बन्ध में उन्होंने अनेक कल्पनाएँ की हैं। उनमें पहली कल्पना मैक्समूलर की है। उन्होंने वैदिक साहित्य का काल 1200 ई. पू. से 600 ई. पू. माना है। दूसरी कल्पना जर्मन विद्वान मारिज विण्टरनित्ज की है। उसने वैदिक साहित्य के आरम्भ होने का काल 2500-2000 ई. पू. तक माना। तिलक और अल याकुबी ने वैदिक साहित्य में वर्णित नक्षत्रों की स्थिति के आधार पर इस साहित्य का आरम्भ काल 4500 ई.पू. माना। श्री अविनाशचन्द्र दास तथा पावगी ने ऋग्वेद में वर्णित भूगर्भ-विषयक साक्षी द्वारा ऋग्वेद को कई लाख वर्ष पूर्व का ठहराया है।

वैदिक साहित्य का वर्गीकरण

वैदिक साहित्य निम्न भागों में बँटा है-

(1) संहिता, (2) ब्राह्मण, (3) आरण्यक, (4) उपनिषद्

और (1) वेदांग (2) सूत्र-साहित्य

संहिता

संहिता का अर्थ है संग्रह। संहिताओं में विभिन्न देवताओं के स्तुतिपरक मंत्रों का संकलन है। संहिताएँ चार हैं-(1) ऋक् (2) यजुष्, (3) साम और (4) अथर्व प्राचीन परम्परा के अनुसार वेद नित्य और अपौरुषेय हैं। उनकी कभी मनुष्य द्वारा रचना नहीं हुई। सृष्टि के प्रारम्भ में परमात्मा ने इनका प्रकाश अग्नि, वायु आदित्य और अंगिरा नामक ऋषियों को दिया। प्रत्येक वैदिक मन्त्र का देवता और ऋषि होता है। मन्त्र में जिसकी स्तुति की जाय वह उस मन्त्र का देवता है और जिसने मन्त्र के अर्थ का सर्वप्रथम प्रदर्शन किया हो वह उसका ऋषि है। पाश्चात्य विद्वान ऋषियों को ही वेद-मन्त्रों का रचयिता मानते हैं।

वैदिक साहित्य को श्रुति भी कहा जाता है, क्योंकि पुराने ऋषियों ने इस साहित्य को श्रवण-परम्परा से ग्रहण किया था। बाद में इस ज्ञान को स्मरण करके जो ग्रन्थ लिखे गए, वे स्मृति कहलाए। श्रुति के शीर्ष स्थान पर उपर्युक्त चार संहिताएँ हैं।

ऋग्वेद

ऋग्वेद में 10,627 मन्त्र और 1,028 सूक्त हैं, ये दस मण्डलों में विभक्त हैं। सूक्तों में देवताओं की स्तुतियाँ हैं। ये बड़ी भव्य, उदात्त और काव्यमयी हैं। इनमें कल्पना की नवीनता, वर्णन की प्रौढ़ता और प्रतिभा की ऊँची उड़ान मिलती है। 'उषा' आदि कई देवताओं के वर्णन बड़े हृदयग्राही हैं। पाश्चात्य विद्वान ऋग्वेद की संहिता को सबसे प्राचीन मानते हैं। उनका विचार है कि इसके अधिकांश सूक्तों की रचना पंजाब में हुई। उस समय आर्य अफगानिस्तान से गंगा-यमुना तक के प्रदेशों में फैले हुए थे। उनके मत में ऋग्वेद में कुभा (काबुल), सुवास्तु (स्वात), क्रमु (कुर्रम), गोमती (गोमल), सिन्धु, गंगा, यमुना सरस्वती तथा पंजाब की पाँच नदियों शतुद्रि (सतलुज), विपाशा (व्यास), परुष्णी (रावी), असिवनी (चनाब) और वितस्ता (झेलम) का उल्लेख है। इन नदियों से सिंचित प्रदेश भारत में आर्य-सभ्यता का जन्म-स्थान माना जाता है।

यजुर्वेद

इसमें यज्ञ-विषयक मन्त्रों का संग्रह है। इनका प्रयोग यज्ञ के समय अध्वर्यु नामक पुरोहित किया करता था। यजुर्वेद में 40 अध्याय हैं। तथा 1975 मन्त्र निहित है। पाश्चात्य विद्वान इसे ऋग्वेद से काफी समय बाद का मानते हैं। ऋग्वेद में आर्यों का कार्य-क्षेत्र पंजाब है, इसमें कुरु-पांचाल। कुरु सतलुज यमुना का मध्यवर्ती भू-भाग (वर्तमान अम्बाला डिवीज़न) है और पांचाल गंगा-यमुना का दोआब था। इसी समय से गंगा-यमुना का प्रदेश आर्य-सभ्यता का केन्द्र हो गया। ऋग्वेद का धर्म उपासना-प्रधान था, किन्तु यजुर्वेद के दो भेद हैं-कृष्ण यजुष् और शुक्ल यजुष्। दोनों के स्वरूप में बड़ा अन्तर है, पहले में केवल मन्त्रों का संग्रह है और दूसरे में छन्दोबद्ध मन्त्रों के साथ गद्यात्मक भाग सभी है।[4,5,6]

सामवेद

इसमें गेय मन्त्रों का संग्रह है। यज्ञ के अवसर पर जिस देवता के लिए होम किया जाता था, उसे बुलाने के लिए उद्गाता उचित स्वर में उस देवता का स्तुति-मन्त्र गाता था। इस गायन को 'साम' कहते थे। प्रायः ऋचाएँ ही गाई जाती थीं। अतः समस्त सामवेद में ऋचाएँ ही हैं। इनकी संख्या 1,875 है। इनमें से केवल 75 ही नई हैं, बाकी सब ऋग्वेद से ली गईं हैं। भारतीय संगीत का मूल सामवेद में उपलब्ध होता है।

अथर्ववेद

अथर्ववेद का यज्ञों से बहुत कम सम्बन्ध है। इसमें आयुर्वेद सम्बन्धी सामग्री अधिक है। इसका प्रतिपाद्य विषय विभिन्न प्रकार की ओषधियाँ, ज्वर, पीलिया, सर्पदंश, विष-प्रभाव को दूर करने के मन्त्र सूर्य की स्वास्थ्य-शक्ति, रोगोत्पादक कीटाणुओ के शमन अदि का वर्णन है , इस वेद में यज्ञ करने के लाभ को तथा यज्ञ से पर्यावरण की रक्षा का भी वर्णन है। वे इसमें आर्य और अनार्य धार्मिक विचारों का सम्मिश्रण देखते हैं, किन्तु वस्तुतः इसमें राजनीति तथा समाज-शास्त्र के अनेक ऊँचे सिद्धान्त हैं। इसमें 20 काण्ड, 34 प्रपाठक, 111 अनुवाक, 731 सूक्त तथा 5,977 मन्त्र हैं, इनमें 1200 के लगभग मन्त्र ऋग्वेद से लिए गए हैं। ऊपर कहे गए चारों संहिताएं पहले एक ही जगह थे। वेदव्यास जी ने यज्ञसिद्धिके लिए चार भागों में विभाजन किया था।

वेदों की शाखाएँ

प्राचीन काल में वेदों की रक्षा गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा होती थी। इनका लिखित एवं निश्चित स्वरूप न होने से वेदों के स्वरूप में कुछ भेद आने लगा और इनकी शाखाओं का विकास हुआ। ऋग्वेद की पाँच शाखाएँ थीं - शैशिरीयशाकल, बाष्कल, आश्वलायन, शांखायन और माण्डूकेय। इनमें अब पहली शाखा ही उपलब्ध होती है। यह शाखा आदित्य सम्प्रदायिका है। शुक्ल यजुर्वेद की दो प्रधान शाखाएँ हैं - माध्यंदिन और काण्व। पहली उत्तरी भारत में मिलती है और दूसरी महाराष्ट्र में। इनमें अधिक भेद नहीं है। कृष्ण यजुर्वेद की आजकल चार शाखाएँ मिलती हैं - तैत्तिरीय मैत्रायणी, काठक (या कठ) तथा कापिष्ठल संहिता। इनमें दूसरी-तीसरी पहली से मिलती हैं, क्रम में थोड़ा ही अन्तर है। चौथी शाखा आधी ही मिली है। यह वेद ब्रह्मसम्प्रदायिका है। सामवेद की दो शाखाएँ थीं - कौथुम और राणायनीय। इसमें कौथुम का केवल सातवाँ प्रपाठक मिलता है। यह शाखा भी आदित्य सम्प्रदायका है। अथर्ववेद की दो शाखाएँ उपलब्ध हैं-पैप्पलाद और शौनक। वर्तमान समय में शौनक शाखा ही पूर्णरुप में प्राप्त होती है, यह शाखा आदित्यसम्प्रदायिका है।

ब्राह्मण-ग्रन्थ

चारों वेदों के संस्कृत भाषा में प्राचीन समय में जो अनुवाद थे 'मन्त्रब्राह्मणयोः वेदनामधेयम्' के अनुसार वे ब्राह्मण ग्रंथ कहे जाते हैं। चार मुख्य ब्राह्मण ग्रंथ हैं- ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ | वेद संहिताओं के बाद ब्राह्मण-ग्रन्थों का निर्माण हुआ माना जाता है। इनमें यज्ञों के कर्मकाण्ड का विस्तृत वर्णन है, साथ ही शब्दों की व्युत्पत्तियाँ तथा प्राचीन राजाओं और ऋषियों की कथाएँ तथा सृष्टि-सम्बन्धी विचार हैं। प्रत्येक वेद के अपने ब्राह्मण हैं। ऋग्वेद के दो ब्राह्मण हैं - (1) ऐतरेय ब्राह्मण और (2) कौषीतकी। ऐतरेय में 40 अध्याय और आठ पंचिकाएँ हैं, इसमें अग्निष्टोम, गवामयन, द्वादशाह आदि सोमयागों, अग्निहोत्र तथा राज्याभिषेक का विस्तृत ऐतरेय ब्राह्मण-जैसा ही है। इनसे तत्कालीन इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ता है। ऐतरेय में शुनःशेप की प्रसिद्ध कथा है। कौषीतकी से प्रतीत होता है कि उत्तर भारत में भाषा के सम्यक् अध्ययन पर बहुत बल दिया जाता था। शुक्ल यजुर्वेद का ब्राह्मण शतपथ के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि इसमें सौ अध्याय हैं। ऋग्वेद के बाद प्राचीन इतिहास की सबसे अधिक जानकारी इसी से मिलती है। इसमें यज्ञों के विस्तृत वर्णन के साथ अनेक प्राचीन

आख्यानों, व्युत्पत्तियों तथा सामाजिक बातों का वर्णन है। इसके समय में कुरु-पांचाल आर्य संस्कृति का केन्द्र था, इसमें पुरूरवा और उर्वशी की प्रणय-गाथा, च्यवन ऋषि तथा महा प्रलय का आख्यान, जनमेजय, शकुन्तला और भरत का उल्लेख है। सामवेद के अनेक ब्राह्मणों में से पंचविंश या ताण्ड्य ही महत्त्वपूर्ण है। अथर्ववेद का ब्राह्मण गोपथ के नाम से प्रसिद्ध है।

आरण्यक

ब्राह्मणों के अन्त में कुछ ऐसे अध्याय मिलते हैं जो गाँवों या नगरों में नहीं पढ़े जाते थे। इनका अध्ययन-अध्यापन गाँवों से दूर (अरण्यों/वनों) में होता था, अतः इन्हें आरण्यक कहते हैं। गृहस्थाश्रम में यज्ञविधि का निर्देश करने के लिए ब्राह्मण-ग्रन्थ उपयोगी थे और उसके बाद वानप्रस्थ आश्रम में संन्यासी आर्य यज्ञ के रहस्यों और दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन करने वाले आरण्यकों का अध्ययन करते थे। उपनिषदों का इन्हीं आरण्यकों से विकास हुआ। आरण्यको का मुख्य विषय आध्यात्मिक तथा दार्शनिक चिंतन है।[7,8,9]

उपनिषद्

उपनिषदों में मानव-जीवन और विश्व के गूढ़तम प्रश्नों को सुलझाने का प्रयत्न किया गया है। ये भारतीय अध्यात्म-शास्त्र के देदीप्यमान रत्न हैं। इनका मुख्य विषय ब्रह्म-विद्या का प्रतिपादन है। वैदिक साहित्य में इनका स्थान सबसे अन्त में होने से ये 'वेदान्त' भी कहलाते हैं। इनमें जीव और ब्रह्म की एकता के प्रतिपादन द्वारा ऊँची-से-ऊँची दार्शनिक उड़ाने ली गई है। भारतीय ऋषियों ने गम्भीरतम चिन्तन से जिन आध्यात्मिक तत्त्वों का साक्षात्कार किया, उपनिषद उनका अमूल्य कोष हैं। इनमें अनेक शतकों की तत्त्व-चिन्ता का परिणाम है। मुक्तिकोपनिषद् चारों वेदों से सम्बद्ध 108 उपनिषद् गिनाये गए हैं, किन्तु 11 उपनिषद् ही अधिक प्रसिद्ध हैं-ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर इनमें छान्दोग्य और बृहदारण्यक अधिक प्राचीन और महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। वैदिक साहित्यका यह सिद्धान्त देखा जाता है प्रत्येक मन्त्रभागमे एक और ब्राह्मणभागमे एक उपनिषद उपदिष्ट थे। अब प्राय लुप्त होगए| अब भी यह सिद्धान्त शुक्ल यजुर्वेदमे बचा है- ईशावास्योनिषद् मन्त्रोपनिषद् है और बृहदारण्यकोपनिषद् ब्राह्मणोपनिषद् है।

सूत्र-साहित्य

वैदिक साहित्य के विशाल एवं जटिल होने पर कर्मकाण्ड से सम्बद्ध सिद्धान्तों को एक नवीन रूप दिया गया। कम-से-कम शब्दों में अधिक-से-अधिक अर्थ-प्रतिपादन करने वाले छोटे-छोटे वाक्यों में सब महत्त्वपूर्ण विधि-विधान प्रकट किये जाने लगे। इन सारगर्भित वाक्यों को सूत्र कहा जाता था। कर्मकाण्ड-सम्बन्धी सूत्र-साहित्य को चार भागों में बाँटा गया-

(1) श्रौत सूत्र (2) गृह्य सूत्र (3) धर्म सूत्र और (4) शुल्ब सूत्र

पहले में वैदिक यज्ञ सम्बन्धी कर्मकाण्ड का वर्णन है। दूसरे में गृहस्थ के दैनिक यज्ञों का, तीसरे में सामाजिक नियमों का और चौथे में यज्ञ-वेदियों के निर्माण का।

श्रौत सूत्र

श्रौत का अर्थ है श्रुति (वेद) से सम्बद्ध यज्ञ याग। अतः श्रौत सूत्रों में तीन प्रकार की अग्नियों के आधान अग्निहोत्र, दर्श पौर्णमास, चातुर्मास्यादि साधारण यज्ञों तथा अग्निष्टोम आदि सोमयागों का वर्णन है। ये भारत की प्राचीन यज्ञ-पद्धति पर बहुत प्रकाश डालते हैं। ऋग्वेद के दो श्रौत सूत्र हैं-शांखायन और आश्वलायन। शुक्ल यजुर्वेद का एक-कात्यायन, कृष्ण यजुर्वेद के छः सूत्र हैं-आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, बौधायन, भारद्वाज, मानव, वैखानस। सामवेद के लाट्यायन, द्राह्यायण और आर्षेय नामक तीन सूत्र हैं। अथर्ववेद का एक ही वैतान सूत्र है।

गृह्य सूत्र

इनमें उन विचारों तथा जन्म से मरणपर्यन्त किये जाने वाले संस्कारों का वर्णन है, जिनका अनुष्ठान प्रत्येक हिन्दू-गृहस्थ के लिए आवश्यक समझा जाता था। उपनयन और विवाह-संस्कार का विस्तार से वर्णन है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से प्राचीन भारतीय समाज के घरेलू आचार-विचार का तथा विभिन्न प्रान्तों के रीति-रिवाज का परिचय पूर्ण रूप से हो जाता है। ऋग्वेद के गृह्य सूत्र शांखायन और आश्वलायन हैं। शुक्ल यजुर्वेद का पारस्कर, कृष्ण यजुर्वेद के आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी, बौधायन, Bharadvaj , वराह,मानव, काठक और वैखानस, सामवेद के गोभिल तथा खादिर और अथर्ववेद का कौशिक। इनमें गोभिलको प्राचीनतम माना जाता है।

धर्मसूत्र

धर्मसूत्रों में सामाजिक जीवन के नियमों का विस्तार से प्रतिपादन है। वर्णाश्रम-धर्म की विवेचना करते हुए ब्रह्मचारी, गृहस्थ व राजा के कर्त्तव्यों, विवाह के भेदों, दाय की व्यवस्था, निषिद्ध भोजन, शुद्धि, प्रायश्चित्त आदि का विशेष वर्णन है। इन्हीं धर्मसूत्रों से आगे चलकर स्मृतियों की उत्पत्ति हुई, जिनकी व्यवस्थाएँ हिन्दू-समाज में आज तक माननीय समझी जाती हैं। वेद से सम्बद्ध केवल तीन धर्मसूत्र ही अब तक उपलब्ध हो सके हैं-आपस्तम्ब, हिरण्यकेशी व बौधायन। ये कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा से सम्बद्ध हैं। शुक्लयजुर्वेदका शंखलिखित धर्मसूत्र होनेकी बात सुना है। अन्य धर्मसूत्रों में सामवेदसे सम्बद्ध गौतमधर्मसूत्र और ऋग्वेदसे सम्बद्ध वसिष्ठधर्मसूत्र उल्लेखनीय हैं।

शुल्ब सूत्र

इनका सम्बन्ध श्रौतसूत्रों से है। शुल्ब का अर्थ है मापने का डोरा। अपने नाम के अनुसार शुल्ब सूत्रों में यज्ञ-वेदियों को नापना, उनके लिए स्थान का चुनना तथा उनके निर्माण आदि विषयों का विस्तृत वर्णन है। ये भारतीय ज्यामिति के प्राचीनतम स्रोतग्रन्थ हैं।

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421 | A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

वेदांग

काफी समय बीतने के बाद वैदिक साहित्य जटिल एवं कठिन प्रतीत होने लगा। उस समय वेद के अर्थ तथा विषयों का स्पष्टीकरण करने के लिए अनेक सूत्र-ग्रन्थ लिखे जाने लगे। इसलिए इन्हें वेदाङ्ग कहा गया।[10,11,12]

वेदाङ्ग छः हैं-

शिक्षा, छन्द, व्याकरण, निरुक्त, कल्प और ज्योतिष[3]

पहले चार वेदांग, मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण और अर्थ समझने के लिए तथा अन्तिम दो वेदांग धार्मिक कर्मकाण्ड और यज्ञों का समय जानने के लिए आवश्यक हैं। व्याकरण को वेद का मुख कहा जाता है, ज्योतिष को नेत्र, निरुक्त को श्रोत्र, कल्प को हाथ, शिक्षा को नासिका तथा छन्द को दोनों पैर।

शिक्षा

उन ग्रन्थों को शिक्षा कहते हैं, जिनकी सहायता से वेद-मन्त्रों के उच्चारण का शुद्ध ज्ञान होता था। वेद-पाठ में स्वरों का विशेष महत्त्व था। इनकी शिक्षा के लिए पृथक् वेदांग बनाया गया। इसमें वर्णों के उच्चारण के अनेक नियम दिये गए हैं। संसार में उच्चारण-शास्त्र की वैज्ञानिक विवेचना करने वाले पहले ग्रन्थ यही हैं। ये वेदों की विभिन्न शाखाओं से सम्बन्ध रखते हैं और प्रातिशाख्य कहलाते हैं। ऋग्वेद अथर्ववेद, वाजसेनीय व तैत्तिरीय संहिता के प्रातिशाख्य मिलते हैं। बाद में इसके आधार पर शिक्षा-ग्रन्थ लिखे गए। इनमें शुक्ल यजुर्वेद की याज्ञवल्क्य-शिक्षा, सामवेद की नारद शिक्षा और पाणिनि की पाणिनीय शिक्षा मुख्य हैं

छन्द

वैदिक मन्त्र छन्दोवद्ध हैं। छन्दों का बिना ठीक ज्ञान प्राप्त किये, वेद- मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण नहीं हो सकता। अतः छन्दों की विस्तृत विवेचना आवश्यक समझी गई। शौनक मुनि के ऋक्प्रातिशाख्य में, शांखायन श्रौतसूत्र में तथा सामवेद से सम्बद्ध निदान सूत्र में इस शास्त्र का व्यवस्थित वर्णन है। किन्तु इस वेदांग का एकमात्र स्वतन्त्र ग्रन्थ पिंगलाचार्य-प्रणीत छन्द सूत्र है। इसमें वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों का

व्याकरण

इस अंग का उद्देश्य सन्धि, शब्द-रूप, धातु-रूप तथा इनकी निर्माण-पद्धति का ज्ञान कराना था। इस समय व्याकरण का सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ पाणिनी का अष्टाध्यायी है; किन्तु व्याकरण का विचार ब्राह्मण-ग्रन्थों के समय से शुरू हो गया था। पाणिनी से पहले गार्ग्य, स्फोटायन, भारद्वाज आदि व्याकरण के अनेक महान आचार्य हो चुके थे। इन सबके ग्रन्थ अब लुप्त हो चुके हैं।

निरुक्त

इसमें वैदिक शब्दों की व्युत्पत्ति दिखाई जाती थी। प्राचीन काल में वेद के कठिन शब्दों की क्रमबद्ध तालिका और कोश निघंटु कहलाते थे और इनकी व्याख्या निरुक्त में होती थी। आजकल केवल यास्काचार्य का निरुक्त ही उपलब्ध होता है। इसका समय 800 ई. पू. के लगभग है।

ज्योतिष

वैदिक युग में यह धारणा थी कि वेदों का उद्देश्य यज्ञों का प्रतिपादन है। यज्ञ उचित काल और मुहूर्त में किये जाने से ही फलदायक होते हैं। अतः काल-ज्ञान के लिए ज्योतिष का ज्ञान अत्यावश्यक माना गया। इस प्रकार ज्योतिष के ज्ञाता को यज्ञवेत्ता जाना गया। इस प्रकार ज्योतिष शास्त्रका विकास हुआ। यह वेद का अंग समझा जाने लगा। इसका प्राचीनतम ग्रन्थ लगधमुनि-रचित वेदांग ज्योतिष पंचसंवत्सरमयं इत्यादि ४४ श्लोकात्मक है। नेपाल में इस ग्रन्थ के आधार पर बना वैदिक तिथिपत्रम् व्यवहार में लाया गया है।

कल्प

कल्प, वेद के छह अंगों (वेदांगों) में से वह अंग है जो कर्मकाण्डों का विवरण देता है। अनेक वैदिक ऐतिहासिकों के मत से कल्पग्रंथ या कल्पसूत्र छः वेदांगों में प्राचीनतम और वैदिक साहित्य के अधिक निकट हैं। वेदांगों में कल्प का विशिष्ट महत्त्व है क्योंकि जन्म, उपनयन, विवाह, अंत्येष्टि और यज्ञ जैसे विषय इसमें विहित हैं।

विचार-विमर्श

वैदिक संस्कृत २००० ईसापूर्व से लेकर ६०० ईसापूर्व तक बोली जाने वाली एक हिन्द-आर्य भाषा थी।[2] यह संस्कृत की पूर्वज भाषा थी और आदिम हिन्द-ईरानी भाषा की बहुत ही निकट की सन्तान थी। वैदिक संस्कृत और अवस्ताई भाषा (प्राचीनतम ज्ञात ईरानी भाषा) एक-दूसरे के बहुत निकट हैं। वैदिक संस्कृत हिन्द-यूरोपीय भाषा-परिवार की हिन्द-ईरानी भाषा शाखा की सब से प्राचीन प्रामाणिक भाषा है।[3]

वैदिक संस्कृत भाषा में व्यापक प्राचीन साहित्य आधुनिक युग में बच गया है, और यह प्रोटो-इंडो-यूरोपीय और प्रोटो-इंडो-ईरानी इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए जानकारी का एक प्रमुख स्रोत रहा है।[4][5] पूर्व-ऐतिहासिक युग में काफी पहले, संस्कृत एक पूर्वी ईरानी भाषा, एवेस्टन भाषा से अलग हो गई थी। पृथक्करण की सटीक सदी अज्ञात है, लेकिन संस्कृत और अवस्थन का यह अलगाव 1800 ईसा पूर्व से पहले निश्चित रूप से हुआ था।[4][5] एवेस्टन भाषा प्राचीन फारस में विकसित

हुई, जोरोस्ट्रियनिज्म की भाषा थी, लेकिन सासैनियन काल में एक मृत भाषा थी।[6][7] प्राचीन भारत में स्वतंत्र रूप से विकसित वैदिक संस्कृत, पाणिनि के व्याकरण और भाषायी ग्रंथ के बाद शास्त्रीय संस्कृत में विकसित हुई,[8] और बाद में कई संबंधित भारतीय उपमहाद्वीप भाषाओं में, जिनमें बौद्ध, हिंदू और जैन धर्म के प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य पाए जाते हैं।[11,12]

हिन्दुओं के प्राचीन वेद धर्मग्रन्थ वैदिक संस्कृत में लिखे गए हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में श्रौत जैसे सख़्त नियमित ध्वनियों वाले मंत्रोच्चारण की हज़ारों वर्षों पुरानी परम्परा के कारण वैदिक संस्कृत के शब्द और उच्चारण इस क्षेत्र में लिखाई आरम्भ होने से बहुत पहले से सुरक्षित हैं। वेदों के अध्ययन से देखा गया है कि वैदिक संस्कृत भी सैंकड़ों वर्षों के दीर्घ काल में बदलती गई। ऋग्वेद की वैदिक संस्कृत, जिसे ऋग्वैदिक संस्कृत कहा जाता है, सब से प्राचीन रूप है। पाणिनि के नियमीकरण के बाद की शास्त्रीय संस्कृत और वैदिक संस्कृत में पर्याप्त अन्तर है। इसलिए वेदों को मूल रूप में पढ़ने के लिए संस्कृत ही सीखना पार्याप्त नहीं बल्कि वैदिक संस्कृत भी सीखनी पड़ती है।[9] अवस्ताई फ़ारसी सीखने वाले विद्वानों को भी वैदिक संस्कृत सीखनी पड़ती है क्योंकि अवस्तई ग्रन्थ कम बचे हैं और वैदिक सीखने से उस भाषा का भी अधिक विस्तृत बोध मिल जाता है।[10]

लौकिक संस्कृत का वैदिक संस्कृत से भेद

लौकिक संस्कृत-साहित्य का वैदिक साहित्य से अनेक प्रकार का भेद पाया जाता है। वैदिक साहित्य शुद्धतः धार्मिक है तथा इसमें सभी लौकिक तत्त्वों का बीज समाहित है। लौकिक संस्कृत साहित्य प्रधान रूप से धार्मिक-धर्ममनिरपेक्ष है अथवा धर्म में इसे लोक-परलोक से ही सम्बन्धित कहा जा सकता है। इस साहित्य में महाकाव्य (रामायण एवं महाभारत), पुराण एवं अन्य काव्य (जिनमें गद्यकाव्य भी सम्मिलित हैं) नाटक, अलंकारशास्त्र, दर्शन, सूत्र, विधि अथवा नियम, कला, वास्तुशास्त्र, औषधि (आयुर्वेद), गणित, मशीन, उद्योग सम्बन्धी ग्रंथ और अन्य विभिन्न विद्याओं की शाखाएं भी प्राप्त होती हैं।

लौकिक साहित्य की भाषा तथा वैदिक साहित्य की भाषा में भी अन्तर पाया जाता है। दोनों के शब्दरूप तथा धातुरूप अनेक प्रकार से भिन्न हैं। वैदिक संस्कृत के रूप केवल भिन्न ही नहीं हैं अपितु अनेक भी हैं, विशिष्टतया वे रूप जो क्रिया रूपों तथा धातुओं के स्वरूप से सम्बन्धित हैं। इस सम्बन्ध में दोनों साहित्यों की कुछ महत्त्वपूर्ण भिन्नताएँ निम्नलिखित हैं:

(१) शब्दरूप की दृष्टि से - उदाहरणार्थ, लौकिक संस्कृत में केवल ऐसे रूप बनते हैं जैसे देवाः जनाः (प्रथम विभक्ति बहुवचन)। जबकि वैदिक संस्कृत में इनमें रूप 'देवासः', 'जनामः' भी बनते हैं। इसी प्रकार, प्रथमा तथा द्वितीया विभक्ति बहुवचन में 'विश्वानि' रूप वैदिक साहित्य में 'विश्वा' भी बन जाता है। तृतीय बहुवचन में वैदिक संस्कृत में 'देवैः' इस रूप के साथ-साथ 'देवेभिः' भी मिलता है। इसी प्रकार सप्तमी विभक्ति एकवचन में 'व्योम्नि' अथवा 'व्योमनि' इन रूपों के साथ-साथ वैदिक संस्कृत में 'व्योमन्' यह रूप भी प्राप्त होता है।

(२) वैदिक तथा लौकिक संस्कृत में क्रियारूपों और धातुरूपों में भी विशेष अन्तर है। वैदिक संस्कृत इस विषय में कुछ अधिक समृद्ध है तथा उसमें कुछ और रूपों को उपलब्धि होती है जबकि लौकिक संस्कृत में क्रिया पदों की अवस्था बताने वाले ऐसे केवल दो ही लकार हैं : लोट् और विधिलिंग जोक लट्प्रकृति अर्थात् वर्तमानकाल की धातु से बनते हैं।

उदाहरणार्थ पठ् से पठतु और पठेत् ये दोनों बनते हैं। वैदिक संस्कृत में क्रियापदों की अवस्था को द्योतित करने वाले दो और लकार हैं : लट् लकार एवं निषेधात्मक लुङ्लकार (Injunctive) (जो लौकिक संस्कृत में केवल निषेधार्थक 'मा' से प्रदर्शित होता है और जो लौकिक संस्कृत में पूर्णतः अप्राप्य है।) इन चारों अवस्थाओं के द्योतक लकार वैदिक संस्कृत में केवल लट् प्रकृति से ही नहीं बनते हैं किन्तु लिट् प्रकृति और लुङ् प्रकृति से भी बनते हैं। इस प्रकार वैदिक संस्कृत में धातुरूप अत्यधिक मात्रा में हैं। इसके अतिरिक्त लिङ् प्रत्यय सम्बन्धी भेद वैदिक संस्कृत में पाये जाते हैं जैसे मिनीमसि भी (लट्, उत्तम पुरुष बहुवचन में) प्रयुक्त होता है परन्तु लौकिक संस्कृत में 'मिनीमही' प्रयुक्त होता है। जहाँ तक धातु से बने हुए अन्य रूपों का प्रश्न है, लौकिक संस्कृत में केवल एक ही 'तुमुन्' (जैसे गन्तुम्) मिलता है जबकि वैदिक संस्कृत में इसके लगभग एक दर्जन रूप मिलते हैं जैसे गन्तवै, गमध्यै, जीवसै, दातवै इत्यादि।

(3) पुनश्च, लौकिक संस्कृत आगे चलकर अधिकाधिक कृत्रिम अथवा सुबद्ध होती गई है और इसके उदाहरण हमें सुबन्धु और बाणभट्ट के गद्यकाव्यों में प्रयुक्त भयावह समासों में मिलते हैं। इस कला में वह अपने क्षेत्र के अन्य गद्यकारों से अत्यन्त उत्कृष्ट हैं।

(4) कुछ वैदिक शब्द लौकिक संस्कृत में अप्राप्य हैं और कुछ नये शब्दों का उद्भव भी हो गया है। उदाहरणार्थ, वैदिक शब्द 'अपस्' का 'कार्य' के अर्थ में प्रयोग लौकिक संस्कृत में लुप्त हो गया है। लौकिक संस्कृत में प्रयुक्त 'परिवार' शब्द वैदिक संस्कृत में अनुपलब्ध है। यह वैदिक एवं लौकिक संस्कृत की अपनी विशेषता है।

शब्दार्थ विज्ञान की दृष्टि से कुछ शब्दों में एक विशिष्ट परिवर्तन हुआ है जैसे 'ऋतु' जिसका वैदिक संस्कृत में अर्थ है 'शक्ति' और लौकिक संस्कृत में उसका अर्थ 'यज्ञ' हो गया है।

ध्वनि अन्तर

IJARETY | ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421 | A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |
|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

वैदिक संस्कृत में 'फ़' (अंग्रेज़ी: f, अ॰ध॰व॰: [ɸ]) और 'ख़' (अ॰ध॰व॰: [x]) की ध्वनियाँ थीं जो बाद की संस्कृत में खोई गई।[11] इसमें 'ख़' के उच्चारण पर ध्यान दें क्योंकि यह 'ख' से बहुत भिन्न है, और 'ख़राब' और 'ख़ास' जैसे शब्दों में मिलती है। आधुनिक काल में एक ग़लत धारणा है कि 'फ़' और 'ख़' की ध्वनियाँ संस्कृत-परम्परा में विदेशज हैं। वर्गीकरण की दृष्टि से 'फ़' को 'उपध्मानीय' और 'ख़' को 'जिह्वामूलीय' कहा जाता है।[12] 'ख़' की ध्वनि को विसर्ग में अघोष कण्ठ्य वर्णों से पहले उच्चारित किया जाता था।[13]

अन्य अन्तर

भाषा में परिवर्तन के अतिरिक्त दोनों साहित्यों में कुछ और भिन्नताएँ प्राप्य हैं:

- (1) प्रथमतः, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, वैदिक साहित्य, प्रधानतः धार्मिक है जब कि लौकिक संस्कृत अपने वर्ण्यविषय की दृष्टि से धर्म के साथ-साथ लौकिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से सम्बद्ध है।
- (2) दोनों की आत्मा यद्यपि अभिन्न है तथापि अभिन्नता में भी भिन्नता के दर्शन होते हैं। वैदिक वाङ्मय, मुख्यतः जैसा कि ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में हमें प्राप्त होता है, आशावादी है जबकि लौकिक संस्कृत साहित्य निराशावादी है, इस निराशावाद की झलक बौद्धों के 'सर्व दुःखं' में भी है। बौद्धों के व्यवहार्यपक्ष 'करुणा' और 'मैत्री' का उद्घोष भी वैदिक साहित्य की मौलिकता है।
- (3) वैदिक धर्म भी परवर्ती काल में अव्यक्त रूप से विशिष्ट परिवर्धित हुआ दिखाई देता है। यहाँ तक कि वैदिक युग के प्रधान देवता जैसे इन्द्र, अग्नि, वरुण को लौकिक संस्कृत में अपेक्षाकृत विशिष्टता प्राप्त नहीं हुई परन्तु ब्रह्मा, विष्णु और शिव इन तीनों को वेदों में केवल गौण स्थान ही प्राप्त था, परवर्ती काल में इन्हें एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो गया। इस काल में कुछ नए देवी देवताओं : गणेश, कुबेर, लक्ष्मी और दुर्गा इत्यादि का भी वैदिक मूल से विकास हुआ।
- (4) परवर्ती, विशेषतः आठवीं और नवीं शताब्दी के बाद के, कवियों में अत्युक्ति का आश्रय ग्रहण करने की ओर अधिक झुकाव है, जैसे माघ, श्रीहर्ष आदि में जबकि पूर्ववर्ती कवियों जैसे अश्वघोष (बौद्ध कवि), भास और कालिदास में अत्युक्ति का अभाव है। वैदिक वाङ्मय में अत्युक्ति का महा अभाव है।
- (5) लौकिक संस्कृति में छन्दोबद्ध रूपों के प्रयोगों की ओर हमें एक विशिष्ट आग्रह दिखायी देता है। वैदिक युग में भी छन्दोबद्ध रूपों का आधिक्य मिलता है, किन्तु वहां विशेषतः यज्ञ सम्बन्धी साहित्य में गद्य का भी प्रयोग हुआ, जैसे यजुर्वेद और ब्राह्मणों में। लौकिक संस्कृत काल में छन्दोबद्ध रूपों के प्रयोग की ओर इतना अधिक झुकाव है कि यहाँ तक कि वैद्यक ग्रन्थ (चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता इत्यादि) भी पद्य में ही लिखे गये। आश्चर्य तो इस बात से होता है कि कोशों की रचना (जैसे अमरकोश) भी छन्दों में ही हुई। कुछ आगे चलकर परवर्ती काल में बाण और सुबन्धु ने गद्य काव्यों के लेखन की शैली का विकास किया, जो कि बड़े-बड़े समासों से मिश्रित होने के कारण अत्यन्त कृत्रिम कही जाती है। इसके अतिरिक्त पूर्ववर्ती काल में सूत्र-रूप में दार्शनिक ग्रंथों को लिखने की प्रणाली का भी प्रचलन हुआ।

आगे चलकर हमें छन्दों की प्रणाली का भी एक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। वैदिक छन्द जगती, त्रिष्टुभ, अनुष्टुभ तो लौकिक संस्कृत में सर्वथा अनुपलब्ध है। जबकि लौकिक संस्कृत के छन्द वंशस्थ, उपेन्द्रवज्रा, शिखरिणी आदि वेदों में पूर्णतः अप्राप्य हैं। हां, यह अवश्य सच है कि लौकिक संस्कृत में प्रयुक्त श्लोक छन्द वैदिक अनुष्टुभ् छन्द का ही रूप हैं।
वैदिक एवं लौकिक संस्कृत की भिन्नताओं की ओर दृष्टिपात करते हुए यह ध्यान देना आवश्यक है कि सिद्धान्त की दृष्टि से दोनों एक दूसरे से काफी मिलती-जुलती हैं। वेदों में कुछ और अधिक ध्वनियां मिलती हैं, जैसे कि ळ। अन्य ध्वनि-सिद्धान्त दोनों के समान ही हैं और उनमें कोई भी वैसा अन्तर नहीं दिखायी देता जैसा कि प्राकृत बोलियों में हमें प्राप्त होता है।[12]

अवस्तई फ़ारसी और वैदिक संस्कृत की तुलना

१९वीं शताब्दी में अवस्ताई फ़ारसी और वैदिक संस्कृत दोनों पर पश्चिमी विद्वानों की नज़र नई-नई पड़ी थी और इन दोनों के गहरे सम्बन्ध का तथ्य उनके सामने जल्दी ही आ गया। उन्होने देखा के अवस्ताई फ़ारसी और वैदिक संस्कृत के शब्दों में कुछ सरल नियमों के साथ एक से दूसरे को अनुवादित किया जा सकता था और व्याकरण की दृष्टि से यह दोनों बहुत नज़दीक थे। अपनी सन् १८९२ में प्रकाशित किताब "अवस्ताई व्याकरण की संस्कृत से तुलना और अवस्ताई वर्णमाला और उसका लिप्यन्तरण" में भाषावैज्ञानिक और विद्वान एब्राहम जैक्सन ने उदाहरण के लिए एक अवस्ताई धार्मिक श्लोक का वैदिक संस्कृत में सीधा अनुवाद किया[14] -

मूल अवस्ताई	वैदिक संस्कृत अनुवाद
तम अमवन्तम यज़तम	तम आमवन्तम यजताम
सूरम दामोहु सविश्तम	शूरम धामसू शाविष्ठम
मिथ्रम यज़ाइ ज़ओथ्राब्यो	मित्राम यजाइ होत्राभ्यः

परिणाम

IJARETY | ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421 | A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

प्राचीन भारत में सिंधु घाटी सभ्यता के पश्चात जिस नवीन सभ्यता का विकास हुआ उसे ही वैदिक सभ्यता के नाम से जाना जाता है। इस काल की जानकारी हमे मुख्यत: वैदिक साहित्य से प्राप्त होती है, जिसमे ऋग्वेद सर्वप्राचीन होने के कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। वैदिक काल को ऋग्वैदिक या पूर्व वैदिक काल (1500–1000 ई.पू.) तथा उत्तर वैदिक काल (1000–600 ई.पू.) में बांटा गया है। वैदिक काल या वैदिक युग (ल. 1500 से ल. 500 ईसा पूर्व), शहरी सिंधु घाटी सभ्यता के अंत और उत्तरी मध्य-गंगा में शुरू होने वाले एक "दूसरे शहरीकरण" के बीच उत्तरी भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास में अवधि है।

वैदिक साहित्य जो इस अवधि के दौरान लिखे गए, समकालीन जीवन का विवरण देने वाले प्रख्यात ग्रंथ हैं और साथ ही विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ भी है। जिन्हें ऐतिहासिक माना गया है और अवधि को समझने के लिए प्राथमिक स्रोतों का गठन किया गया है। संबंधित पुरातात्विक अभिलेखों के साथ ये दस्तावेज वैदिक संस्कृति के विकास का पता लगाने और उस काल का अनुमान लगाने की अनुमति देते हैं।[1]

वेदों की रचना और मौखिक रूप से एक पुरानी हिन्द-आर्य भाषाएँ बोलने वालों द्वारा सटीक रूप से प्रेषित की गई थी, जो इस अवधि के शुरू में भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में चले गए थे। वैदिक समाज "पितृसत्तात्मक" था। आरंभिक वैदिक आर्य पंजाब में केंद्रित एक कांस्य युग के समाज से थे, जो कि राज्यों के बजाय जनजातियों में संगठित थे। इनका मुख्य रूप से जीवन देहाती था। ल. 1500–1300 ई.पू., वैदिक आर्य पूर्व में उपजाऊ पश्चिमी गंगा के मैदान में फैल गए और उन्होंने लोहे के उपकरण अपना लिए, जो जंगल को साफ करने और अधिक व्यवस्थित, कृषि जीवन के लिए उपयोगी थे।
वैदिक काल के उत्तरार्ध में भारत राजवंश, यदुवंश और कुरु साम्राज्य मुख्य शक्ति के रूप में उबरे। वैदिक हिन्दू समाज यज्ञ परक था और यज्ञ सामाजिक व्यवस्था का एक अंग था। इस काल की वर्ण व्यवस्था "कार्यानुसार" थी ना की जन्मनुसार थी।
वैदिक काल के अंत में (ल. 700 से 500 ई.पू मे) महानगरो और बड़े राज्यों महाजनपद का उदय हुआ। इसके साथ-साथ श्रमण परम्परा (जैन धर्म और बौद्ध धर्म सहित) में वृद्धि हुई, जिसने वैदिक परंपराओं को चुनौती दी।
वैदिक संस्कृति के चरणों से पहचानी जाने वाली पुरातात्विक संस्कृतियों में चार मुख्य है–[2]

1. चित्रित धूसर मृद्भाण्ड संस्कृति
2. काले और लाल बर्तन संस्कृति
3. गेरू की कब्र संस्कृति
4. चित्रित ग्रे वेयर संस्कृति में गेरू रंग की बर्तनों की संस्कृति
5.

वेदों के अतिरिक्त संस्कृत के संस्कृत साहित्य के अन्य कई ग्रंथो की रचना भी 9वी शताब्दी से 5वी शताब्दी ई.पू काल में हुई थी। वेदांगसूत्रौं की रचना मन्त्र, ब्राह्मणग्रंथ और उपनिषद इन वैदिकग्रन्थौं को व्यवस्थित करने मे हुआ है। रामायण, महाभारत और पुराणौं की रचना हुआ जो इस काल के ज्ञानप्रदायी स्रोत माना गया हैं। अनन्तर चार्वाक, तान्त्रिकौं, बौद्ध और जैन धर्म का उदय भी हुआ।
इतिहासकारों का मानना है कि आर्य मुख्यतः उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में रहते थे इस कारण आर्य सभ्यता का केन्द्र मुख्यत उत्तरी भारत था। इस काल में उत्तरी भारत (आधुनिक पाकिस्तान, बांग्लादेश तथा नेपाल समेत) कई महाजनपदों में बंटा था।

नाम और देशकाल

वैदिक सभ्यता का नाम ऐसा इस लिए पड़ा कि वेद उस काल की जानकारी का प्रमुख स्रोत हैं। वेद चार है - ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद और यजुर्वेद। इनमें से ऋग्वेद की रचना सबसे पहले हुई थी। ऋग्वेद में ही गायत्री मन्त्र है जो सावित्री (सूर्य देव) को समर्पित है।

ऋग्वेद के काल निर्धारण में विद्वान एकमत नहीं है। सबसे पहले मैक्स मूलर ने वेदों के काल निर्धारण का प्रयास किया। उसने बौद्ध धर्म (550 ईसा पूर्व) [3]से पीछे की ओर चलते हुए वैदिक साहित्य के तीन ग्रंथों की रचना को मनमाने ढंग से 200-200 वर्षों का समय दिया और इस तरह ऋग्वेद के रचना काल को 1200 ईसा पूर्व के करीब मान लिया पर निश्चित रूप से उसके आंकलन का कोई आधार नहीं था।
वैदिक काल को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है- ऋग्वैदिक काल और उत्तर वैदिक काल। ऋग्वैदिक काल आर्यों के आगमन के तुरंत बाद का काल था जिसमें कर्मकांड गौण थे पर उत्तरवैदिक काल में हिन्दू धर्म में कर्मकांडों की प्रमुखता बढ़ गई।[9,10,11]

ऋग्वैदिक काल (1500-1000 ई.पू.)

इस काल की तिथि निर्धारण जितनी विवादास्पद रही है उतनी ही इस काल के लोगों के बारे में सटीक जानकारी। इसका एक प्रमुख कारण यह भी है कि इस समय तक केवल इसी ग्रंथ (ऋग्वेद) की रचना हुई थी। मैक्स मूलर के अनुसार आर्य का मूल निवास मध्य ऐशिया है।आर्यो द्वारा निर्मित सभ्यता वैदिक काल कहलाई। आर्यो द्वारा विकसित सभ्ता ग्रामीण सभ्यता कहलायी। आर्यों की भाषा संस्कृत थी।

मैक्स मूलर ने जब अटकलबाजी करते हुए इसे 1200 ईसा पूर्व से आरंभ होता बताया था (लेख का आरंभ देखें) उसके समकालीन विद्वान डब्ल्यू. डी. ह्विटनी ने इसकी आलोचना की थी। उसके बाद मैक्स मूलर ने स्वीकार किया था कि " पृथ्वी पर कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो निश्चित रूप से बता सके कि वैदिक मंत्रों की रचना 1000 ईसा पूर्व में हुई थी या कि 1500 ईसापूर्व में या 2000 या 3000 "।[4]

ऐसा माना जाता है कि आर्यो का एक समूह भारत के अतिरिक्त ईरान (फ़ारस) और यूरोप की तरफ़ भी गया था। ईरानी भाषा के प्राचीनतम ग्रंथ अवेस्ता की सूक्तियां ऋग्वेद से मिलती जुलती हैं। अगर इस भाषिक समरूपता को देखें तो ऋग्वेद का रचनाकाल 1000 ईसापूर्व आता है। लेकिन बोगाज-कोई (एशिया माईनर) में पाए गए 1400 ईसा पूर्व के अभिलेख में हिंदू देवताओं इंद, मित्रावरुण, नासत्य इत्यादि को देखते हुए इसका काल और पीछे माना जा सकता है।

बाल गंगाधर तिलक ने ज्योतिषीय गणना करके इसका काल 6000 ई.पू. माना था। हरमौन जैकोबी ने जहाँ इसे 4500 ईसापूर्व से 2500 ईसापूर्व के बीच आंका था वहीं सुप्रसिद्ध संस्कृत विद्वान विंटरनित्ज़ ने इसे 3000 ईसापूर्व का बताया था।

प्रशासन

प्रशासन की सबसे छोटी इकाई कुल थी। एक कुल में एक घर में एक छत के नीचे रहने वाले लोग शामिल थे। परिवार के मुखिया को कुलुप कहा जाता था। एक ग्राम कई कुलों से मिलकर बना होता था। ग्रामों का संगठन विश् कहलाता था और विशों का संगठन जन। कई जन मिलकर राष्ट्र बनाते थे। ग्राम के मुखिया को ग्रामिणी, विश का प्रधान विशपति ,

जन का शासक राजन् (राजा) तथा राष्ट्र के प्रधान को सम्राट कहते थे। आर्यों की प्रशासनिक संस्थाएं काफी सशक्त अवस्था में थी। प्रारंभ में राजा का चुनाव जनता के द्वारा किया जाता था बाद में उसका पद धीरे-धीरे पैतृक होता चला गया परंतु राजा निरंकुश नहीं होता था वह जनता की सुरक्षा की पूरी जिम्मेदारी लेता था इस सुरक्षा व्यवस्था के बदले में लोग राजा को स्वैच्छिक कर देते थे जिसे बलि कहा जाता था। ऋग्वैदिक आर्यों की दो महत्वपूर्ण राजनैतिक संस्थाएं थीं जिन्हें सभा और समिति कहा जाता था-[5]

१."सभा-" इसे उच्च सदन भी कहा जा सकता है यह समाज से आए हुए बुद्धिमान और अनुभवी व्यक्तियों की संस्था थी। सभा के सदस्यों को सभेय अथवा सभासद कहा जाता था और सभा का अध्यक्ष सभापति कहा जाता था सभा के सदस्यों को पितर कहा जाता था जिससे पता लगता है कि ये बुजुर्ग और अनुभवी लोग थे।

२. "समिति-" समिति आम जनमानस की संस्था थी उसके सदस्य समस्त नागरिक होते थे इसमें सामान्य विषयों पर चर्चा होती थी । उसके अध्यक्ष को ईशान कहा जाता था। प्रारंभ में समिति में स्त्रियां भी आती थी और उसमें आकर ऋक नामक गान किया करती थी। आर्यों की सबसे प्राचीन संस्था को जनसभा थी उसे "विदथ" कहा जाता था।

धर्म

ऋग्वैदिक काल में प्राकृतिक शक्तियों की ही पूजा की जाती थी और कर्मकांडों की प्रमुखता नहीं थी। ऋग्वैदिक काल धर्म कीं अन्य विशेषताएं • क्रत्या, निऋति, यातुधान, ससरपरी आदि के रूप मे अपकरी शक्तियो अर्थात, राछसों, पिशाच एवं अप्सराओ का जिक्र दिखाई पडता है। इस समय में मूर्ति पूजन नहीं होता था और ना ही मंत्रोचार किया जाता था। कर्मकांड जैसे पूजा-पाठ, व्रत,यज्ञ आदि इस काल में नहीं होते थे।।

उत्तरवैदिक काल (1000–600 ई०पू०)

ऋग्वैदिक काल में आर्यों का निवास स्थान सिंधु तथा सरस्वती नदियों के बीच में था। बाद में वे सम्पूर्ण उत्तर भारत में फ़ैल चुके थे। सभ्यता का मुख्य क्षेत्र गंगा और उसकी सहायक नदियों का मैदान हो गया था। गंगा को आज भारत की सबसे पवित्र नदी माना जाता है। इस काल में विश् का विस्तार होता गया और कई जन विलुप्त हो गए। भरत, त्रित्सु और तुर्वस जैसे जन् राजनीतिक हलकों से ग़ायब हो गए जबकि पुरू पहले से अधिक शक्तिशाली हो गए। पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार में कुछ नए राज्यों का विकास हो गया था, जैसे - काशी, कोसल, विदेह (मिथिला), मगध और अंग।

ऋग्वैदिक काल में सरस्वती नदी को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। गंगा का एक बार और यमुना नदी का उल्लेख तीन बार हुआ है। इस काल मे कौसाम्बी नगर में पहली बार पक्की ईटो का प्रयोग किया गया। इस काल मे वर्ण व्यवसाय के बजाय जन्म के आधार पे निर्धारित होने लगे।

वैदिक साहित्य

- वैदिक साहित्य में चार वेद एवं उनकी संहिताओं, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदों एवं वेदांगों को शामिल किया जाता है।
- वेदों की संख्या चार है- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद।
- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद विश्व के प्रथम प्रमाणिक ग्रन्थ है।
- वेदों को अपौरुषेय कहा गया है। गुरु द्वारा शिष्यों को मौखिक रूप से कंठस्त कराने के कारण वेदों को "श्रुति" की संज्ञा दी गई है।

ऋग्वेद

1. ऋग्वेद देवताओं की स्तुति से सम्बंधित रचनाओं का संग्रह है।
2. यह 10 मंडलों में विभक्त है। इसमे 2 से 7 तक के मंडल प्राचीनतम माने जाते हैं। प्रथम अष्टम, नवम एवं दशम मंडल बाद में जोड़े गए हैं। इसमें 1028 (1017 साकल मे+11 बालखिल्य मे)सूक्त हैं।
3. इसकी भाषा पद्यात्मक है।
4. ऋग्वेद में 33 प्रकार के देवों (दिव्य गुणो से युक्त पदार्थो) का उल्लेख मिलता है।
5. प्रसिद्ध गायत्री मंत्र जो सूर्य से सम्बंधित देवी गायत्री को संबोधित है, ऋग्वेद में सर्वप्रथम प्राप्त होता है।
6. ' असतो मा सद्गमय ' वाक्य ऋग्वेद से लिया गया है।
7. ऋग्वेद में मंत्र को कंठस्त करने में स्त्रियों के नाम भी मिलते हैं, जिनमें प्रमुख हैं- लोपामुद्रा, घोषा, शाची, पौलोमी एवं काक्षावृती आदि।
8. इसके पुरोहित के नाम होत्री है।
9. गौत्र, शूद्र, वर्ण शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख है।
10. 9 वां मंडल के सभी 114 सूक्त सोम को समर्पित हैं।
11. इसमे लगभग 11000 श्लोक हैं।
12. इसके प्रथम श्लोक मे अग्नि का उल्लेख है।
13. इसमे कई स्थानो पर ऋषभदेव का उल्लेख मिलता है।

यजुर्वेद

- यजु का अर्थ होता है यज्ञ। इसमें धनुर्विद्या का उल्लेख है।
- इसके पाठकर्ता को अध्वर्यु कहते हैं।
- यजुर्वेद वेद में यज्ञ की विधियों का वर्णन किया गया है।
- इसमे मंत्रों का संकलन आनुष्ठानिक यज्ञ के समय सस्तर पाठ करने के उद्देश्य से किया गया है।
- इसमे मंत्रों के साथ साथ धार्मिक अनुष्ठानों का भी विवरण है, जिसे मंत्रोच्चारण के साथ संपादित किए जाने का विधान सुझाया गया है।
- यजुर्वेद की भाषा पद्यात्मक एवं गद्यात्मक दोनों है।
- यजुर्वेद की दो शाखाएं हैं- कृष्ण यजुर्वेद तथा शुक्ल यजुर्वेद।
- कृष्ण यजुर्वेद की चार शाखाएं हैं- मैत्रायणी संहिता, काठक संहिता, कपिन्थल तथा संहिता। शुक्ल यजुर्वेद की दो शाखाएं हैं- मध्यान्दीन तथा कण्व संहिता। शुक्ल यजुर्वेद पद्य में मिलता है
- यह 40 अध्यायों में विभाजित है।
- वाजसनेय शुक्ल-यजुर्वेद की संहिताओं को बोला जाता है
- यजुर्वेद का ब्राह्मण ग्रंथ शतपथ ब्राह्मण है
- यजुर्वेद का उपवेद धनुर्वेद है (धनुर्वेद अस्त्र-शस्त्र से संबंधित है द्रोणाचार्य,विश्वामित्र,कृपाचार्य इससे संबंधित प्रमुख आचार्य हैं)
- इसी ग्रन्थ में पहली बार राजसूय तथा वाजपेय जैसे दो राजकीय समारोह का उल्लेख है।
- इशोपनिषद यजुर्वेद का अंतिम भाग है यह आध्यात्मिकता से संबंधित है

सामवेद

सामवेद की रचना ऋग्वेद में दिए गए मंत्रों को गाने योग्य बनाने हेतु की गयी थी।

- इसमे 1810 छंद हैं जिनमें 75 को छोड़कर शेष सभी ऋग्वेद में उल्लेखित हैं।
- सामवेद तीन शाखाओं में विभक्त है- कौथुम, राणायनीय और जैमनीय।
- सामवेद को भारत की प्रथम संगीतात्मक पुस्तक होने का गौरव प्राप्त है।
- सामवेद के ब्राह्मण ग्रंथ पंचविश,ताण्डय,जैमिनीय है
- गंधर्व-वेद सामवेद का उपवेद है यह भरत,नारद मुनि से संबंधित है इसमें गायन,नृत्य आदि वर्णित हैं[10,11,12]

ब्राह्मण

वैदिक मन्त्रों तथा संहिताओं को ब्रह्म कहा गया है। वहीं ब्रह्म के विस्तारित रुप को ब्राह्मण कहा गया है। पुरातन ब्राह्मण में ऐतरेय, शतपथ, पंचविंश, तैतरीय आदि विशेष महत्वपूर्ण हैं। महर्षि याज्ञवल्क्य ने मन्त्र सहित ब्राह्मण ग्रंथों की उपदेश

| ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421 | A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

आदित्य से प्राप्त किया है। संहिताओं के अन्तर्गत कर्मकांड की जो विधि उपदिष्ट है, ब्राह्मण मे उसी की सप्रमाण व्याख्या देखने को मिलता है। प्राचीन परम्परा में आश्रमानुरुप वेदों का पाठ करने की विधि थी अतः ब्रह्मचारी ऋचाओं ही पाठ करते थे ,गृहस्थ ब्राह्मणों का, वानप्रस्थ आरण्यकों और संन्यासी उपनिषदों का। गार्हस्थ्यधर्म का मननीय वेदभाग ही ब्राह्मण है।

- यह मुख्यतः गद्य शैली में उपदिष्ट है।
- ब्राह्मण ग्रंथों से हमें बिम्बिसार के पूर्व की घटना का ज्ञान प्राप्त होता है।
- ऐतरेय ब्राह्मण में आठ मंडल हैं और पाँच अध्याय हैं। इसे पंजिका भी कहा जाता है।
- ऐतरेय ब्राह्मण में राज्याभिषेक के नियम प्राप्त होते हैं।
- तैतरीय ब्राह्मण कृष्णयजुर्वेद का ब्राह्मण है।
- शतपथ ब्राह्मण में १०० अध्याय,१४ काण्ड और ४३८ ब्राह्मण है। गान्धार, शल्य, कैकय, कुरु, पांचाल, कोसल, विदेह आदि स्थलों का भी उल्लेख होता हैशतपथवर्ती ब्राह्मण गोपथ है।

आरण्यक

आरण्यक वेदों का वह भाग है जो गृहस्थाश्रम त्याग उपरान्त वानप्रस्थ लोग जंगल में पाठ किया करते थे | इसी कारण आरण्यक नामकरण किया गया।

- इसका प्रमुख प्रतिपाद्य विषय रहस्यवाद, प्रतीकवाद, यज्ञ और पुरोहित दर्शन है।
- वर्तमान में सात अरण्यक उपलब्ध हैं।
- सामवेद और अथर्ववेद का कोई आरण्यक स्पष्ट और भिन्न रूप में उपलब्ध नहीं है।

उपनिषद

उपनिषद प्राचीनतम दार्शनिक विचारों का संग्रह है। उपनिषदों में 'वृहदारण्यक' तथा 'छान्दोन्य', सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। इन ग्रन्थों से बिम्बिसार के पूर्व के भारत की अवस्था जानी जा सकती है। परीक्षित, उनके पुत्र जनमेजय तथा पश्चात कालीन राजाओं का उल्लेख इन्हीं उपनिषदों में किया गया है। इन्हीं उपनिषदों से यह स्पष्ट होता है कि आर्यों का दर्शन विश्व के अन्य सभ्य देशों के दर्शन से सर्वोत्तम तथा अधिक आगे था। आर्यों के आध्यात्मिक विकास, प्राचीनतम धार्मिक अवस्था और चिन्तन के जीते-जागते जीवन्त उदाहरण इन्हीं उपनिषदों में मिलते हैं। उपनिषदों की रचना संभवतः बुद्ध के काल में हुई, क्योंकि भौतिक इच्छाओं पर सर्वप्रथम आध्यात्मिक उन्नति की महत्ता स्थापित करने का प्रयास बौद्ध और जैन धर्मों के विकास की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हुआ।

- कुल उपनिषदों की संख्या 108 है।
- मुख्य रूप से शास्वत आत्मा, ब्रह्म, आत्मा-परमात्मा के बीच सम्बन्ध तथा विश्व की उत्पत्ति से सम्बंधित रहस्यवादी सिधान्तों का विवरण दिया गया है।
- "सत्यमेव जयते" मुण्डकोपनिषद से लिया गया है।
- मैत्रायणी उपनिषद् में त्रिमूर्ति और चार्तु आश्रम सिद्धांत का उल्लेख है।

वेदांग

युगान्तर में वैदिक अध्ययन के लिए छः विधाओं (शाखाओं) का जन्म हुआ जिन्हें 'वेदांग' कहते हैं। वेदांग का शाब्दिक अर्थ है वेदों का अंग, तथापि इस साहित्य के पौरूषेय होने के कारण श्रुति साहित्य से पृथक ही गिना जाता है। वेदांग को स्मृति भी कहा जाता है, क्योंकि यह मनुष्यों की कृति मानी जाती है। वेदांग सूत्र के रूप में हैं इसमें कम शब्दों में अधिक तथ्य रखने का प्रयास किया गया है।

वेदांग की संख्या 6 है

- शिक्षा- स्वर ज्ञान (वेद की नासिका)
- कल्प- धार्मिक रीति एवं पद्धति (वेद के हाथ)
- निरुक्त- शब्द व्युत्पत्ति शास्त्र (वेद के कान)
- व्याकरण- व्याकरण (वेद के मुख)
- छंद- छंद शास्त्र (वेद के पैर)
- ज्योतिष- खगोल विज्ञान (वेद की आंखे)

सूत्र साहित्य

सूत्र साहित्य वैदिक साहित्य का अंग है तथा यह उसे समझने में सहायक भी है।

ब्रह्म सूत्र-श्री वेद व्यास ने वेदांत पर यह परमगूढ़ ग्रंथ लिखा है जिसमें परमसत्ता, परमात्मा, परमसत्य, ब्रह्मस्वरूप ईश्वर तथा उनके द्वारा सृष्टि और ब्रह्मतत्त्व वर गूढ़ विवेचना की गई है। इसका भाष्य श्रीमद् आदिशंकराचार्य जी ने भगवान व्यास जी के कहने पर लिखा था।
कल्प सूत्र- ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण। वेदों का हस्त स्थानीय वेदांग।
श्रोत सूत्र- महायज्ञ से सम्बंधित विस्तृत विधि-विधानों की व्याख्या। वेदांग कल्पसूत्र का पहला भाग।
स्मार्तसूत्र - षोडश संस्कारों का विधान करने वाला कल्प का दूसरा भाग।
शुल्बसूत्र- यज्ञ स्थल तथा अग्निवेदी के निर्माण तथा माप से सम्बंधित नियम इसमें हैं। इसमें भारतीय ज्यामिति का प्रारम्भिक रूप दिखाई देता है। कल्प का तीसरा भाग।
धर्म सूत्र- इसमें सामाजिक धार्मिक कानून तथा आचार संहिता है। कल्प का चौथा भाग
गृह्य सूत्र- परुवारिक संस्कारों, उत्सवों तथा वैयक्तिक यज्ञों से सम्बंधित विधि-विधानों की चर्चा है।

राजनीतिक स्थिति

ऋग्वैदिक काल मुख्यतः एक कबीलाई व्यवस्था वाला शासन था जिसमें सैनिक भावना प्रमुख थी। राजा को गोमत भी कहा जाता था।

- वैदिक काल में राजतंत्रात्मक प्रणाली प्रचलित थी। इसमें शासन का प्रमुख राजा होता था।
- राजा वंशानुगत तो होता था परन्तु जनता उसे हटा सकती थी। वह क्षेत्र विशेष का नहीं बल्कि जन विशेष का प्रधान होता था।
- राजा युद्ध का नेतृत्वकर्ता था। उसे कर वसूलने का अधिकार नही था। जनता द्वारा स्वेच्छा से दिए गए भाग से उसका खर्च चलता था।
- सभा, समिति तथा विदथ नामक प्रशासनिक संस्थाएं थीं।
- अथर्ववेद में सभा एवं समिति को प्रजापति की दो पुत्रियाँ कहा गया है। समिति का महत्वपूर्ण कार्य राजा का चुनाव करना था। समिति का प्रधान ईशान या पति कहलाता था। विदथ में स्त्री एवं पुरूष दोनों सम्मलित होते थे। नववधुओं का स्वागत, धार्मिक अनुष्ठान आदि सामाजिक कार्य विदथ में होते थे।
- सभा श्रेष्ठ लोंगो की संस्था थी, समिति आम जनप्रतिनिधि सभा थी एवं विदथ सबसे प्राचीन संस्था थी। ऋग्वेद में सबसे ज्यादा बार उल्लेख विदथ का 122 बार हुआ है।
- सैन्य संचालन वरात, गण व सर्ध नामक कबीलाई संगठन करते थे।
- शतपथ ब्रह्मण के अनुसार अभिषेक होने पर राजा महँ बन जाता था। राजसूय यज्ञ करने वाले की उपाधि राजा तथा वाजपेय यज्ञ करने वाले की उपाधि सम्राट थी।
- स्पर्श, गुप्तचरों को और पुरूप, दुर्गापति को कहा जाता था।
- राजा का प्रशासनिक सहयोग पुरोहित एवं सेनानी आदि 12 रत्निन करते थे। चारागाह के प्रधान को वाज्रपति एवं लड़ाकू दलों के प्रधान को ग्रामिणी कहा जाता था।[10,11]

12 रत्निन
पुरोहित- राजा का प्रमुख परामर्शदाता,
सेनानी- सेना का प्रमुख,
ग्रामीण- ग्राम का सैनिक पदाधिकारी,
महिषी- राजा की पत्नी,
सूत- राजा का सारथी,
क्षत्रि- प्रतिहार,
संग्रहित- कोषाध्यक्ष,
भागदुध- कर एकत्र करने वाला अधिकारी,
अक्षवाप- लेखाधिकारी,
गोविकृत- वन का अधिकारी,
पालागल- राजा का मित्र।

विविध क्षेत्रों के विशेषज्ञ

होत्र- ऋग्वेद का पाठ करने वाला।
उदगाता- सामवेद की रचनाओं का गान करने वाला।
अध्वर्यु- यजुर्वेद का पाठ करने वाला
ब्रह्मा- संपूर्ण यज्ञों की देख रेख करने वाला।

IJARETY | ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| Impact Factor: 6.421 | A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |
|| Volume 11, Issue 1, January 2024 ||

सामाजिक स्थिति

- ऋग्वेद के दसवें मंडल में चार वर्णों का उल्लेख मिलता है। वर्ण व्यवस्था कर्म आधारित थी। दसवें मंडल को परवर्ती काल माना जाता है।
- समाज पितृसत्तात्मक था। संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित थी।
- परिवार का मुखिया 'कुलप' कहलाता था। परिवार कुल कहलाता था। कई कुल मिलकर ग्राम, कई ग्राम मिलकर विश, कई विश मिलकर जन एवं कई जन मिलकर जनपद बनते थे। अतिथि सत्कार की परम्परा का सबसे ज्यादा महत्व था।
- एक और वर्ग ' पणियों ' का था जो धनि थे और व्यापार करते थे।
- भिखारियों और कृषि दासों का अस्तित्व नहीं था। संपत्ति की इकाई गाय थी जो विनिमय का माध्यम भी थी। सारथी और बढई समुदाय को विशेष सम्मान प्राप्त था।
- अस्पृश्यता, सती प्रथा, परदा प्रथा, बाल विवाह आदि का प्रचलन नहीं था।
- शिक्षा एवं वर चुनने का अधिकार महिलाओं को था। विधवा विवाह, महिलाओं का उपनयन संस्कार, नियोग, गन्धर्व एवं अंतर्जातीय विवाह प्रचलित था।
- वस्त्राभूषण स्त्री एवं पुरूष दोनों को प्रिय थे।
- जौ (यव) मुख्य अनाज था। शाकाहार का प्रचलन था। सोम रस (अम्रित जैसा) का प्रचलन था।
- नृत्य, संगीत, पासा, घुड़दौड़, मल्लयुद्ध, शुइकर आदि मनोरंजन के प्रमुख साधन थे।
- अपाला, घोष, मैत्रयी, विश्ववारा, गार्गी आदि विदुषी महिलाएं थीं।
- ऋग्वेद में अनार्यों (मुर्ख या दस्यु) को मृद्धवाय (अस्पष्ट बोलने वाला), अवृत (नियमों- व्रतों का पालन नहीं करने वाला), बताया गया है।
- सर्वप्रथम 'जाबालोपनिषद ' में चारों आश्रम ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम का उल्लेख मिलता है।

आर्थिक स्थिति

- अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार पशुपालन एवं कृषि था
- ज्यादा पालतु पशु रखने वाले गोमत कहलाते थे। चारागाह के लिए ' उत्यति ' या ' गव्य ' शब्द का प्रयोग हुआ है। दूरी को ' गवयुती ', पुत्री को दुहिता (गाय दुहने वाली) तथा युद्धों के लिए ' गविष्टि ' का प्रयोग होता था।
- राजा को जनता स्वेच्छा से कर देती थी।
- आवास घास-फूस एवं काष्ठ निर्मित होते थे।
- ऋण लेने एवं देने की प्रथा प्रचलित थी जिसे ' कुसीद ' कहा जाता था।
- बैलगाड़ी, रथ एवं नाव यातायात के प्रमुख साधन थे।

कृषि

- सर्वप्रथम शतपथ ब्राम्हण में कृषि की समस्त प्रक्रियाओं का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के प्रथम और दसम मंडलों में बुआई, जुताई, फसल की गहाई आदि का वर्णन है। ऋग्वेद में केवल यव (जौ) नामक अनाज का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के चौथे मंडल में कृषि का वर्णन है।
- परवर्ती वैदिक साहित्यों में ही अन्य अनाजों जैसे- गोधूम(गेंहू), ब्रीही (चावल) आदि की चर्चा की गई है। काठक संहिता में 24 बैलों द्वारा हल खींचे जाने का, अथर्ववेद में वर्षा, कूप एवं नहर का तथा यजुर्वेद में हल का ' सीर ' के नाम से उल्लेख है। उस काल में कृत्रिम सिंचाई की व्यवस्था भी थी।

पशुपालन

पशुओं का चारण ही उनकी आजीविका का प्रमुख साधन था। गाय ही विनिमय का प्रमुख साधन थी। ऋग्वैदिक काल में भूमिदान या व्यक्तिगत भू-स्वामित्व की धारणा विकसित नही हुई थी।

व्यापार

आरम्भ में अत्यन्त सीमित व्यापार प्रथा का प्रचलन था। व्यापार विनिमय पद्धति पर आधारित था। समाज का एक वर्ग 'पाणी' व्यापार किया करते थे। राजा को नियमित कर देने या भू-राजस्व देने की प्रथा नहीं थी। राजा को स्वेच्छा से भाग या नजराना दिया जाता था। पराजित कबीला भी विजयी राजा को भेंट देता था। अपने धन को राजा अपने अन्य साथियों के बीच बांटता था।

धातु एवं सिक्के : ऋग्वेद में उल्लेखित धातुओं में सर्वप्रथम धातू, अयस (ताँबा या कांसा) था। वे सोना (हिरव्य या स्वर्ण) एवं चांदी से भी परिचित थे। लेकिन ऋग्वेद में लोहे का उल्लेख नहीं है। ' निष्क ' संभवतः सोने का आभूषण या मुद्रा था जो विनिमय के काम में भी आता था।

उद्योग : ऋग्वैदिक काल के उद्योग घरेलु जरूरतों के पूर्ति हेतु थे। बढ़ई एवं धूकर का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्व था। अन्य प्रमुख उद्योग वस्त्र, बर्तन, लकड़ी एवं चर्म कार्य था। स्त्रियाँ भी चटाई बनने का कार्य करतीं थीं।

निष्कर्ष

धार्मिक स्थिति

- आर्य एक ईश्वर पर विश्वास करते थे।
- यहाँ प्राकृतिक मानव के हित के लिये ईश्वर से कामना की जाती थी। वे मुख्य रूप से केवल ब्रह्माण्ड को धारण करने वाले एकमात्र परमपिता परमेश्वर के पूजक थे। वैदिक धर्म पुरूष प्रधान धर्म था। स्वर्ग या अमरत्व कीपरिकल्पना नहीं थी।
- वैदिक धर्म पुरोहितों व यज्ञ से नियंत्रित धर्म था। पुरोहित ईश्वर एवं मानव के बीच मध्यस्थ था। मनुष्य एवं देवता के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाने वाले देवता के रूप में अग्नि की पूजा की जाती थी। वैदिक देवताओं का स्वरुप महिमामंडित मानवों का है। ऋग्वेद में 33 प्रकार के तत्वों (दिव्य गुणों से युक्त पदार्थो) का उल्लेख है।[12]

संदर्भ

1. "संग्रहीत प्रति". वाईवेस पॅनोरामा. ०७ अक्तूबर २०१५. मूल से 6 जुलाई 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि २५-०६-२०१७. |
2. ↑ "पाठ-1 वेद का परिचय एवं महत्त्व". स्कूल ऑफ़ ओपन लर्निंग. दिल्ली विश्वविद्यालय. अभिगमन तिथि २५-०६-२०१७. |
3. ↑ "पाठ-4 वेदांग-साहित्य". स्कूल ऑफ़ ओपन लर्निंग. दिल्ली विश्वविद्यालय. मूल से 15 मई 2018 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि २५ जून, २०१७. |
4. "Change Request Documentation: 2011-041". SIL International. मूल से 5 जून 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 अप्रैल 2020.
5. ↑ "How Sanskrit evolved in India". मूल से 7 जून 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 6 जून 2019.
6. ↑ A brief history of India Archived 2016-12-24 at the वेबैक मशीन, Alain Daniélou, Kenneth Hurry, Inner Traditions / Bear & Co, 2003, ISBN 978-0-89281-923-2, ... The language of the Indian Aryans, Vedic Sanskrit, is the oldest of the languages known as Indo-European, of which written documents and spoken forms exist ...
7. ↑ Philip Baldi (1983). An Introduction to the Indo-European Languages. Southern Illinois University Press. पपृ° 51–52. आईऍसबीऍन° 978-0-8093-1091-3.
8. ↑ Christopher I. Beckwith (2009). Empires of the Silk Road: A History of Central Eurasia from the Bronze Age to the Present. Princeton University Press. पपृ° 363–368. आई°ऍस°बी°ऍन° 0-691-13589-4. मूल से 21 जुलाई 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 अप्रैल 2020.
9. ↑ Ahmad Hasan Dani; B. A. Litvinsky (1996). History of Civilizations of Central Asia: The crossroads of civilizations, A.D. 250 to 750. UNESCO. पृ° 85. आई°ऍस°बी°ऍन° 978-92-3-103211-0. मूल से 14 फ़रवरी 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 अप्रैल 2020.; Quote: "The oldest extant manuscript of the Avesta dates back to 1258 or 1278. In the Sasanian period, Avestan was considered a dead language."
10. ↑ Hamid Wahed Alikuzai (2013). A Concise History of Afghanistan in 25 Volumes. Trafford. पृ° 44. आई°ऍस°बी°ऍन° 978-1-4907-1441-7. मूल से 14 फ़रवरी 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 अप्रैल 2020.;Quote "The Avestan language is called Avestan because the sacred scriptures of Zoroastrianism, Avesta, were written in this old form. Avestan died out long before the advent of Islam and except for scriptural use not much has remained of it."
11. ↑ Rens Bod (2013). A New History of the Humanities: The Search for Principles and Patterns from Antiquity to the Present. Oxford University Press. पपृ° 14–18. आई°ऍस°बी°ऍन° 978-0-19-164294-4. मूल से 14 फ़रवरी 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 12 अप्रैल 2020.
12. ↑ "A reminder: Panini didn't destroy lingual diversities with his Sanskrit grammar, he unified them". मूल से 27 मई 2019 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 6 जून 2019.

IJARETY

International Journal of Advanced Research in Education and Technology

ISSN: 2394-2975

Impact Factor: 6.421

www.ijarety.in

editor.ijarety@gmail.com